महात्मा गाँधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय, बिहार

मानविकी एवं भाषासंकाय

संस्कृत विभाग

एम. ए. द्वितीय सत्र

विषय- काव्यप्रकाश

Code – SNKT2003

उपविषय- काव्यशास्त्रीय आचार्य, काल विभाजन और काव्य का लक्षण

प्रो. प्रसून दत्त सिंह
अध्यक्ष, संस्कृत विभाग
महात्मा गाँधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय

काव्यशास्त्रीय आचार्य

“काव्यं प्रकाश्यते इति काव्यप्रकाशः” काव्यप्रकाश काव्य सौन्दर्य की परख रखनेवाला शास्त्र है। प्रारंभ में काव्यशास्त्र विषयक ग्रंथ काल्यालङ्कार कहे जाते रहे लेकिन ऐसा लगता है कि काव्यशास्त्र में रस, गुण, दोष, अलङ्कार आदि विषयों की विवेचना होने पर ‘छत्रिन्याय’ से उसे केवल अलङ्कारशास्त्र कहा जाता होगा।

कालक्रम में काव्यशास्त्र के लिये पाँच नाम प्रयोग में आये

(1)काव्यालङ्कार

(2)काव्यशास्त्र

(3)अलङ्कारशास्त्र

(4) साहित्यशास्त्र

(5) क्रियाकल्प

नवम शताब्दी में कारिका रूप में भामह का काव्यालङ्कार काव्यशास्त्र का आदिग्रन्थ है। दसवीं शताब्दी में राजशेखर का काव्यमीमांसा। ग्यारहवीं शताब्दी में मम्मट ने काव्यप्रकाश तथा चौदहवीं शताब्दी में विश्वनाथ ने साहित्यदर्पण नाम से भी अपने ग्रंथों की रचना की। पंडितराज जगन्नाथ कृत रसगंगाधर काव्यशास्त्र का अत्यन्त प्रौढ़ ग्रन्थ है।

शास्त्र –

'शासनात् शास्त्रं' शासन का अर्थ किसी कार्य में प्रवृत्त करना या किसी कार्य से निवृत्त करना होता है। वेद, स्मृति, धर्मशास्त्र आदि ग्रंथ सत्कार्यों में प्रवृत्ति और असत्कायों से निवृत्ति का ही आदेश देते हैं, किन्तु काव्य का प्रधान उद्देश्य शासनात्मक न होकर सद्यः परनिवृत्ति या रसास्वादन ही है। यही उसका वेद आदि शास्त्रों से विभेदक मुख्य धर्म भी है। कर्तव्याकर्तव्य का उपदेश काव्य का गौण प्रयोजन है।

अतः किसी गूढ तत्त्व का प्रतिपादन करने के कारण 'शासनात् शास्त्रं' के स्थान पर 'शंसनात् शास्त्रं' यदि यह परिभाषा की जाये तो काव्य का आत्मा भी सुरक्षित रहेगा और शास्त्र जोड़ने से उसकी गौरववृद्धि भी हो जौयेगी।

काल विभाजन

क. प्रारंभिक काल - अज्ञात से भामह तक।

ख. रचनात्मक काल - भामह से आनन्दवर्धन। (600 से 800 ई)

ग. निर्णयात्मककाल – आनन्दवर्धन से मम्मट। (800 से 1100 ई)

घ. व्याख्याकाल - मम्मट से विश्वेश्वर। (1100 से 1750 ई)

क. प्रारम्भिक काल

दो मुख्य आचार्य भरत, भामह। भरत ने नाट्यशास्त्र के 16 वें अध्याय में 4 अलङ्कार, 10 गुण व 10 दोषों का विवेचन किया जबकि भामह ने 38 अलङ्कारों की विवेचना की। नाट्यशास्त्र के 6ठे अध्याय में भरत ने रससूत्र का प्रतिपादन किया है।

ख. रचनात्मक काल

इन चारों सम्प्रदायों के मौलिक ग्रंथों का निर्माण

रस सम्प्रदाय -	संस्थापक - भरत। व्यख्याकार- भट्टलोल्लट, शङ्कुक, भट्टनायक, अभिनवगुप्त।
अलङ्कारसम्प्रदाय –	भामह, उद्भट, रुद्रट
रीतिसम्प्रदाय -	दण्डी, वामन
ध्वनिसम्प्रदाय –	आनन्दवर्धन

ग. निर्णयात्मक काल

ध्वन्यालोक की प्रसिद्ध टीका लोचन, नाट्यशास्त्र की अभिनवभारती के निर्माता अभिनवगुप्त एवं वक्रोक्तिजीवितकार कुन्तक मुख्य आचार्य हैं।

घ. व्याख्याकाल

हेमचन्द, विश्वनाथ, जयदेव, राजशेखर, क्षेमेन्द्र, अमरचन्द आदि मुख्य आचार्य हैं।

अपारे काव्य संसारे कविरेकः प्रजापतिः।
यथास्मै रोचते विश्वं तथेदं परिवर्त्तते॥

आनंदवर्धन ने कवि को ब्रह्म और काव्यसंसार को उसकी सृष्टि माना है। **'कवृ वर्णने'** धातु से काव्य शब्द की निष्पत्ति हई है और काव्यसौंदर्य की परख रखनेवाले शास्त्र काव्यशास्त्र के नाम से अभिहित हुए हैं। काव्यशास्त्र का आदिग्रन्थ भामह द्वारा प्रतिपादित **'काव्यालंकार'** है; किन्तु काव्य में रस, गुण, अलंकार, दोषादि विषयों का विवेचन होने पर छत्रिन्याय से उसे अलंकारशास्त्र कहा जाने लगा तथा कालक्रम में काव्यशास्त्र के लिए साहित्यशास्त्र एवं क्रियाकल्प संज्ञा भी व्यवहृत हुए हैं।

काव्यप्रकाशकार मम्मट ने काव्यप्रकाश के प्रथम उल्लास की चतुर्थ कारिका में अपने पूर्ववर्ती तथा पश्चात्वर्ती काव्याचार्यों द्वारा भी प्रस्तुत काव्यलक्षणों का एक ऐसा समन्वयवादी स्वरूप उपस्थापित किया है जो अव्याप्ति, अतिव्याप्ति तथा असम्भव इन तीनों दोषों से रहित अत्यन्त निर्दुष्ट एवं श्लाघनीय प्रतीत होता है। यद्यपि आचार्य विश्वनाथ ने मम्मट द्वारा प्रतिपादित काव्यलक्षण का अत्यन्त द्दढ़ता से खण्डन किया है किन्तु वास्तविक दष्टि से विचार करने पर यह लक्षण उतना दूषित नहीं लगता जितना विरोधियों ने उसको चित्रित करने का प्रयत्न किया है।

काव्य का लक्षण

मम्मट द्वारा प्रतिपादित काव्यलक्षण पर विचार करने से पूर्व कतिपय अन्यान्य आचार्यों द्वारा प्रतिपादित काव्यलक्षणों पर एक दृष्टि डालते हैं-

- भामह - शब्दार्थौ सहितौ काव्यं गद्य - पद्यं च तद् द्विधा।
- विश्वनाथ - वाक्यं रसात्मकं काव्यं ।
- जगन्नाथ - रमणीयार्थ प्रतिपादकः शब्दः काव्यं।
- रूद्रट - ननु शब्दार्थौ काव्यम्।
- दण्डी - शरीरं तावदिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली।
- वामन - रीतिरात्मा काव्यस्य।
- कुन्तक - शब्दार्थौ सहितौ वक्रकविव्यापारशालिनी।
  बन्धे व्यवस्थितौ काव्यं तद्विदाह्लादकारिणी॥
- आनन्दवर्धन - काव्यस्यात्मा ध्वनिः।

मम्मट का काव्य लक्षण –

तददोषौ शब्दार्थो सगुणावनलंकृती पुनः क्वापि।

(दोषों से रहित, गुणयुक्त और साधारणतः अलंकार सहित परन्तु कहीं - कहीं अलंकार रहित शब्द और अर्थ की समष्टि काव्य कहलाती है।)

यहाँ ध्यातव्य है कि मम्मट शब्द और अर्थ दोनों की समष्टि को काव्य मानते हैं। अकेला शब्द या अकेला अर्थ इनमें कोई भी काव्य नहीं है। यहाँ लक्षण में 'तत्' शब्द काव्य का ही विशेषण है। पूर्व की कारिका में उन्होंने चूँकि 'काव्यं यशसे' आदि का प्रयोग किया है अतः यहाँ पुनरुक्ति दोष के निवारणार्थ उन्होंने सुष्टु प्रयोग करते हुए तत् शब्द का प्रयोग किया है।

इस ‘शब्दार्थौं’ पद के तीन विशेषण लक्षण में प्रस्तुत किए गये हैं

1. अदोषौ

2. सगुणौ

3. अनलंकृती पुनः क्वापि

अदोषौ - अर्थात् काव्य को च्युतसंस्कार इत्यादि जो प्रबल दोष हैं उनसे रहित होना आवश्यक है, क्योंकि सर्वथा दोषरहित शब्दार्थ की स्थिति में **‘एवं काव्यं प्रविरलविषयं निर्विषयं वा स्यात’** की स्थिति उत्पन्न हो जाएगी और संसार में काव्य का मिलना असम्भव हो जाएगा।

सगुणौ - दूसरी बात यह कि वे दोनों माधुर्य, ओज और प्रसाद इन गुणों से युक्त होने चाहिए। *यहाँ विश्वनाथ ने प्रश्न खड़े किये कि गुण तो रस के धर्म हैं अतः शब्द और अर्थ में ये नहीं रह सकते। मम्मट ने अष्टम उल्लास में ‘गुणवृत्या पुनस्तेषां वृत्तिः शब्दार्थयोर्मता’ लिखकर शब्दार्थ के साथ भी गौणीवृत्ति से गुणों का सम्बन्ध प्रतिपादित किया है।*

अनलंकृती पुनः क्वापि – 'सूर्वत्र सालंकारौ क्वचितु स्फुटालंकारविरहेऽपि न काव्यत्वहानिः' काव्य में सामान्यतः अलंकार होना चाहिए किन्तु यदि कहीं अलंकार न भी हो और रसाभिव्यक्ति हो रही हो तो काव्यत्व की हानि नहीं होती। यथा-

यः कौमारहरः स एव हि वरस्ता एव चैत्रक्षपास्ते
चोन्मीलितमालतीसुरमयः प्रौढ़ा कदम्बानिलाः।
सा चैवास्मि तथापि तत्र सुरतव्यापारलीलाविधौ
रेवारोधसि वेतसीतरूतले चेतः समुत्कण्ठते॥

(अर्थात् जिस पतिदेव ने विवाह के बाद प्रथम सम्भोग द्वारा मेरे कौमार्य का हरण किया वे ही पतिदेव हैं और आज वे ही चैत्र मास की उज्ज्वल चाँदनी से भरी हुई राते हैं। खिली हुई मालती की सुगन्ध से भरी हुई लताये हैं और मैं भी वही हूँ, फिर भी न जाने क्यों आज वहाँ नर्मदा के तट पर उस वेत के पेड़ के नीचे जहाँ अनेक बार अपने पतिदेव के साथ संभोग कर चुकी हूँ उन कामकेलियों के लिए चित्ते उत्कण्ठित हो रहा है।)

इस उदारहरण पर विश्वनाथ आक्षेप करते हैं कि यहाँ उत्कण्ठा का कारण न होने पर भी उत्कण्ठारूप कार्य का वर्णन होने पर विभावना अलंकार है तथा उत्कण्ठाभाव कार्य न होने से विशेषोक्ति अलंकर है।

मम्मट इसका उत्तर देते हैं कि ये दोनों अलंकार भावमुखेन न होकर अभावमुखेन हैं। इस प्रकार मम्मट ने अपने काव्य लक्षण को अत्यन्त सुंदर और उपादेयी बना दिया है।

धन्यवाद